द्वितीय अध्याय :

भारतीय लोकतंत्र एवं नगरीय स्थानीय स्वशासन

लोकतंत्र राजनीतिक व्यवस्था का एक स्वरुप है जिसमें समस्त नागरिकों को समान दर्जा प्रदान होता है और शासन के कार्यों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जनता की भागीदारी होती है। भारतीय लोकतंत्र की नींव ब्रिटिश उपनिवेशवादी शासन के विरुद्ध दीर्घकालीन संघर्ष के पश्चात रखी गयी और इसी संघर्ष के दौरान भारतीय संविधान का निर्माण हुआ, जिसके आधार पर भारत में लोकतंत्रात्मक शासन का विकास हुआ। यदि देखा जाये तो भारत में स्थानीय स्वशासन का इतिहास लोकतंत्र के वर्तमान स्वरुप से भी पुराना है यद्यपि इसका स्वरुप वर्तमान से भिन्न है। प्रस्तुत अध्याय में भारतीय लोकतंत्र एवं भारत में स्थानीय स्वशासन के विकास को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

भारतीय लोकतंत्र

भारत विश्व का सबसे लोकप्रिय, सफल, सक्रिय, अधिकतम जनसँख्या वाला लोकतंत्र है जिसकी प्रमुख विशेषता 'विविधता में एकता' है । जातीय, प्रजातीय, धार्मिक आदि आधारों पर विश्व में किसी अन्य समाज में इतनी विविधताये नहीं पाई जाती जितनी की भारतीय समाज में पाई जाती है । ब्रिटिश उपनिवेशवाद से कठिन एवं दीर्घकालीन लोकतान्त्रिक संघर्ष के पश्चात 15

अगस्त 1947 को भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई । संविधान सभा द्वारा लगभग 3 सालों के लोकतंत्रीय विमर्श के परिणाम स्वरुप भारतीय संविधान की परिणिति होती है।[1] लोकतंत्र ऐसी शासन व्यवस्था है, जिसमें जनता को सर्वोपरि महत्त्व दिया जाता है एवं नियम व्यवस्था एवं कार्यविधियों का निर्माण जनहित को ध्यान में रखकर अथवा महत्त्व प्रदान करते हुए किया जाता है। जैसा की प्रथम अमेरिकी राष्ट्रपति अब्राहिम लिंकन ने गेट्सबर्ग में भाषण देते हुए कहा था कि ' *लोकतंत्र जनता द्वारा जनता के लिए जनता का शासन है*' । हमारे देश में भी संविधान निर्माताओं ने जनता को सर्वोपरि रखते हुए ही संविधान का निर्माण किया था । हमारे संविधान की प्रस्तावना के प्रारंभिक शब्द 'हम भारत के लोग''[2] लोकतंत्र की इसी भावना की पुष्टि करते हैं, कि भारतीय लोकतंत्र का मूल आधार यहाँ की जनता ही है। भारतीय शासन की लोकतंत्रात्मक भावना का विकास यहाँ के संविधान के निर्माण में समावेशित किया गया है । हालाँकि इसकी शुरुआत भारत शासन अधिनियम 1935 के साथी ही मानी जाती है, क्योंकि इस अधिनियम के पारित होते ही भारत में इस बात पर विशेष बल दिया जाने लगा, कि भारत का संविधान का निर्माण स्वयं भारतीय जनता द्वारा किया जाएगा । 1938 में पंडित नेहरु ने संविधान सभा की स्पष्ट मांग रखते हुए कहा कि "कांग्रेस स्वतंत्र और लोक्तान्त्रतामक राज्य का समर्थन करती है । उसने यह प्रस्ताव किया है, कि स्वतंत्र भारत का संविधान बिना

किसी बाहरी हस्तक्षेप के ऐसी संविधान सभा द्वारा बनाया जायेगा जो वयस्क निर्वाचन के आधार पर निर्वाचित हो । उस समय ब्रिटिश सरकार द्वारा बराबर इस मांग को नजरंदाज किया जाता रहा अथवा इसका विरोध किया जाता रहा परन्तु, 1939 में प्रथम विश्व युद्ध का श्री गणेश होने के बाद ब्रिटिश सरकार को इस बात को मानने के लिए बाध्य होना पड़ा, कि भारत की संवैधानिक समस्यायों का समाधान अत्यंत आवश्यक है । अंततः, ब्रिटिश की बहुदलीय सरकार ने इस मांग को हरी झंडी दिखा दी की भारतीय संविधान भारतीयों द्वारा ही बनाया जाये, फिर 1942 में सर स्टेनफोर्ड क्रिप्स को ब्रिटिश सरकार के प्रस्ताव के साथ भारत भेजा गया। जिसकी प्रमुख शर्तों को लेकर भारत के दोनों राजनैतिक दलों (“कांग्रेस एवं मुस्लिम लीग) दोनों एक मत नहीं हो सके। क्योंकि मुस्लिम लीग ने अपने लिए साम्प्रदायिक आधार पर अलग राज्य की मांग की । अंततः, ब्रिटिश सरकार को अपने ही प्रस्ताव रखने पड़े । जिनकी घोषणा भारत व इंगलैंड में 16 मई 1946 को की गयी थी । इन सुझावों का मुख्य उद्देश्य दोनों दलों के मध्य परस्पर सहमति बनाना था इस प्रस्ताव का मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश भारत और देशी प्रान्तों को मिलाकर भारत संघ का निर्माण किया जाना था । जिसका कार्यक्षेत्र वैदेशिक मामलों को देखना , सुरक्षा ,एवं संचार विषयों तक ही सीमित था ।[3] अन्य कार्यों को प्रान्तों के द्वारा स्वयं की सुविधा के अनुसार किया जायेगा । परिणाम स्वरुप प्रस्तुत प्रस्तावों पर दोनों

दलों के मध्य सहमति हो गयी एवं मुस्लिम लीग ने भी संविधान सभा के निर्वाचन में भाग लिया और उसके प्रतिनिधि चुने गए । इसके पश्चात् मंत्रिमंडल के समूह संबंधी खंडो के निर्वाचन के बारे में दोनों दलों में मतभेद हो गये । ब्रिटिश सरकार को इस विवाद में लीग का पक्ष सही लगा और लीग के सांप्रदायिक निर्वाचन के आधार पर प्रथक राज्य के निर्वाचन की मांग को स्वीकार कर लिया गया । इस मांग को भी स्वीकृति मिल गयी कि, दो अलग राज्यों के संविधान के लिए दो अलग-अलग संविधान सभाएं गठित की जायेंगी ।[4] इसीलिए 9 दिसम्बर 1946 को जब संविधान सभा की पहली बैठक हुई तो मुस्लिम लीग के सदस्यों ने भाग नहीं लिया । मुस्लिम लीग के बिना ही संविधान सभा ने अपना कार्य प्रारंभ कर दिया । 14 अगस्त 1947 को संविधान निर्माण के शीर्षकों को प्रस्तुत किया । 29 अगस्त 1947 को प्रारूप समिति गठित की गयी 6 दिसम्बर को संविधान परिषद ने पहली बार औपचारिक रूप से संविधान लिखने के कार्य को शुरू करने के लिए बैठक की । 4 नवम्बर 1947 को संविधान का प्रारूप पूर्ण रूप से तैयार करके जमा कर दिया । 1948 में संविधान परिषद् के सदस्यों की बैठक हुई। 1949 में जनता के समक्ष खुले रूप से संविधान को प्रस्तुत किया गया एवं जनता से विचार मांगे गए । 26 नवम्बर 1949 को संविधान के अंतिम प्रारूप को अंगीकृत करके आधिकारिक रूप दिया गया ।[5] फिर 26 जनवरी 1950 को भारतीय

संविधान को पूर्ण रूप से अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित किया गया । हमारे देश में संविधान के लागू होने के साथ ही भारत में लोकतंत्रात्मक शासन की स्थापना हो गयी । लोकतंत्र ऐसी शासन व्यवस्था है, जिसमें प्रशासनिक कार्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जनता द्वारा किये जाएँ एवं किसी भी नीति या निर्णय निर्माण का प्रमुख आधार जनमत और प्रमुख ध्येय जनहित है। लोकतंत्र शासन का मूल आधार जनता ही होती है, राज्य तो उसका साधन मात्र होता है । किसी भी शासन व्यवस्था को सक्रिय रूप प्रदान करने के लिए कुछ विशेष मूल्यों के आधार पर शासन के स्वरुप को निर्धारित किया जाता है । इसी प्रकार लोकतंत्रात्मक व्यवस्था के भी प्रमुख मूल्य जीवन स्वतन्त्रता, समानता, सामान्य शुभ विविधता जन संप्रभुता प्रतिनिधि सरकार नागरिकों के मूल अधिकार धर्म की स्वतंत्रा इत्यादि हैं । जिन्हें सुनिश्चित करके अथवा शासन का आधार स्तम्भ बनाकर ही लोकतंत्रात्मक शासन की स्थापना की जा सकती है। भारतीय शासन व्यवस्था इन्ही लोकतान्त्रिक मूल्यों को सुनिश्चित करने का प्रयास करती है । यद्यपि हमारे संविधान निर्माता इस तथ्य से अवगत थे कि, भारत का सर्वांगीण विकास लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था के अंतर्गत ही किया जा सकता है। इसीलिए संविधान निर्माताओं ने हमारे संविधान में सम्प्रभुता समाजवाद, पंथ निरपेक्षता, न्याय, स्वतन्त्रता, समानता एवं बंधुत्व जैसी लोकतान्त्रिक मूल्यों का समावेश किया है । भारतीय संविधान की

प्रस्तावना संविधान की कुंजी है । जिसके सम्बन्ध में पंडित नेहरू ने कहा था कि 'यह संकल्प से कुछ अधिक है , यह एक घोषणा है एक दृढ निश्चय है , एक प्रतिज्ञा है एक वचन है और हम सभी के लिए यह एक समर्पण है।"[6]उच्चतम न्यायालय के अनेक निर्णयों में उद्देशिका के महत्व और उपयोगिता बताई गयी है । उद्देशिका को कभी परिवर्तित नहीं किया का जा सकता ।[7] संविधान की प्रस्तावना के प्रारंभिक शब्द हम भारत के लोग संविधान के अंतर्गत वर्णित भारतीय शासन व्यवस्था के लोकतान्त्रिकरण की और उन्मुख होने की ओर इंगित करते है । अर्थात, इन शब्दों से विशेष रूप से इस बात पर बल देने का प्रयास किया गया है, की भारत की शासन व्यवस्था का स्त्रोत भारत की जनता है । जिनके हित, मत और आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर ही यहाँ की शासन व्यवस्था का संचालन होगा । शासन संबंधी नीति एवं नियमो का संचालन भी इसी आधार पर किया जायेगा। इसका दूसरा भाग भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व संपन्न समाजवादी पंथ निरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के उद्देश्य को स्पष्ट करता है । यहाँ सम्पूर्ण प्रभुत्व संपन्न से तात्पर्य ऐसे राष्ट्र से है, जो कि, राज्य के बाह्य एवं आतंरिक मामलों संबंधी निर्णय लेने में पूर्णत: स्वतंत्र होता है । साथ ही, इस तथ्य का भी वर्णन है की भारत को समाजवादी राष्ट्र बनाया जाये अर्थात एक ऐसा राष्ट्र जिसमें आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र में नागरिको के मध्य समानता लाने का प्रयास किया

जायेगा एवं समाज के कमजोर व वंचित वर्गों के लिए राज्य द्वारा विशेष प्रबंध किये जायेंगे। इसके साथ ही देश में व्याप्त साम्प्रदायिक विविधता को देखते हुए भारत को पंथ निरपेक्ष राज्य बनाने के उद्देश्य को भी शामिल किया गया। जिसमें देश का कोई भी राष्ट्रीय धर्म न हो । देश का प्रत्येक नागरिक स्वेच्छा से अपने धर्म का पालन कर सके और उसका अनुयायी बन सके। उसके उपर किसी भी धर्म को लेकर राष्ट्र की तरफ से दबाब न डाला जा सके न ही किसी विशेष धर्म का पालन करने की बाध्यता हो । इन प्रमुख मूल्यों के साथ इसे लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाया जाये अर्थात एक ऐसा राष्ट्र जिसका प्रमुख वंशानुगत न होकर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से राष्ट्र की जनता द्वारा चुना जाये । इसका एक उद्देश्य यह भी है कि इन लोकतान्त्रिक मूल्यों को ध्यान में रखते हुए भारत में ऐसे लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना की जाये जिसका मूल आधार जनमत और मूल ध्येय जनहित हो। इन सभी आधारों को मान्यता देकर संविधान निर्माता भारतीय नागरिको के लिए सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय सुनिश्चित करना चाहते थे क्योकि, हमारे संविधान निर्माता इस तथ्य से अवगत थे कि भारतीय लोकतंत्र राजनैतिक होने के साथ साथ सामाजिक भी होना चाहिये तभी हर तबके का विकास संभव है। डॉ अम्बेडकर ने इसी सम्बन्ध में संविधान सभा के समापन भाषण में कहा था कि यदि राजनीतिक लोकतंत्र का आधार सामाजिक लोकतंत्र नहीं है तो वह नष्ट हो जायेगा और सामाजिक

का तात्पर्य ऐसी जीवन पद्धति से है,[8] जो समानता स्वतंत्रता और बंधुता को मान्यता देती हो। सामाजिक न्याय सामाजिक समूहों वर्गों या व्यक्तियों के प्रतिद्वान्दात्मक दावों या हितों में विधि द्वारा सामंजस्य पैदा करके सामाजिक असुंतलन को दूर करने का व्यापक रूप है। जिसके द्वारा ही लोक कल्याणकारी राज्य बनाना संभव होगा । इसी प्रकार भारत में सार्वजनिक वयस्क मताधिकार को स्वीकार किया गया है । सर्वोच्च न्यायलय के निर्देश पर चुनाव आयोग द्वारा विभिन्न सुधारात्मक कदम उठाये गए है जैसे की मतदाताओं को अपने प्रत्याशियों के सम्बन्ध में जानने का मौलिक अधिकार है एवं नामांकन पत्र में कोई भी कॉलम खाली छोड़ना अधिकारों के उल्लंघन के बराबर है । सामाजिक और राजनैतिक लोकतंत्र न्याय की संकल्पना तब तक सुनिश्चित नहीं की जा सकती है, जब तक की नागरिकों को आर्थिक न्याय न प्रदान किया जाये । भूतकाल में लोकतंत्र को राजनैतिक लोकतंत्र के रूप में ही पहचाना गया जिसमें मोटे तौर से एक व्यक्ति एक मत होता है किन्तु मत उस व्यक्ति के लिए कोई महत्त्व नहीं रखता जो निर्धन और निर्बल है या भूखा है या भूख से मर रहा है। आर्थिक लोकतंत्र और समानता में धीरे धीरे वृद्धि करने के लिए तथा सभी असमानताओं को हटाने के किये प्रयोग किया जाता है[9]। इसके साथ ही भारतीय लोकतंत्र नागरिकों को विचार अभिव्यक्ति विश्वास धर्म और उपासना की स्वतंत्रता प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्रदान करना चाहते है,

जिससे व्यक्ति की गरिमा और भारतीय नागरिकों में एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता का विकास किया जा सके उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है, कि भारतीय भारतीय संविधान की प्रस्तावना में वर्णित शब्द भारतीय शासन व्यवस्था की कुंजी हैं एवं जहां संविधान की भाषा में संदिग्धता होती है वहां उद्देशिका संविधान के विधिक निर्वचन में सहायता करती है।[10] प्रस्तावना में वर्णित प्रमुख मूल्य लोकतंत्रात्मक व्यवस्था को पूर्णतः परिपूर्ण करते है, इन्ही लोकतान्त्रिक मूल्यों को विधिक रूप देने के लिए भारतीय संविधान के भाग-3 के अंतर्गत नागरिकों के लिए मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है। संविधान के अंतर्गत अनुच्छेद 12 राज्य और 13 विधि को परिभाषित करता है, तत्पश्चात अनुच्छेद 14 से 35 तक मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है। जिनमें 14 से 18 तक समानता 19 से 22 तक स्वतन्त्रता 23 एवं 24 शोषण के विरुद्ध है 25 से 28 तक धार्मिक स्वतंत्रता 29 एवं 30 संस्कृति एवं शिक्षा संबंधी अनुच्छेद 31 में संपत्ति का अधिकार का वर्णन था, जो अभी मूल अधिकार न होकर विधिक अधिकार की श्रेणी में आज्ञा एवं 32 से 35 तक संवैधानिक उपचारों के अधिकार वर्णित है,[11] जिन्हें लागू करने की राज्य पर विधिक बाध्यता है और इन अधिकारों के द्वारा लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था को एक सफल लोकतंत्र का रूप दिया जा सके। अनुच्छेद 14 में नागरिकों के लिए विधि के समक्ष समता को सुनिश्चित करने की बात कही गयी है जिसके

अंतर्गत विधि का सामान संरक्षण भी अन्तर्निहित है, जिससे तात्पर्य है कि देश का प्रत्येक नागरिक विधि कानून के समक्ष समान है । चाहे वह साधारण हो या किसी भी पद प्रतिष्ठा से लाभान्वित हो और विधि के समान संरक्षण से तात्पर्य है कि किसी भी प्रकार से वंचित कमजोर एवं जरूरतमंद व्यक्तियों के लिये राज्य की तरफ से विशेष प्रावधान किये जायेंगे। जिससे उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके और वे व्यक्ति होने की गरिमा के साथ अपना जीवन व्यतीत कर सके। संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकारों के घोषणा पत्र के अनुच्छेद 1 में कहा गया है की सभी मनुष्य जन्म से ही गरिमा और अधिकारों की द्रष्टि से समान है उन्हें बुद्धि और अंतर्चेतना प्रदान की गयी है । हमारे संविधान का अनुच्छेद 14 इसी तथ्य को सुनिश्चित करता है कि विधि के समक्ष प्रत्येक व्यक्ति समान महत्त्व रखता है एवं अनुछेद 15 धर्म मूल वंश लिंग जाति एवं जन्म स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध करता है। अर्थात किसी भी व्यक्ति के साथ उपर्युक्त आधारों पर राज्य द्वारा किसी भी प्रकार के भेदभाव को स्वीकार नहीं किया जायेगा एवं न ही किसी व्यक्ति को उपर्युक्त आधारों पर किसी भी प्रकार के सार्वजनिक स्थानों पर जाने से रोका जायेगा । राज्य स्त्री बच्चों अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए विशेष उपबंध किये जायेंगे। अनुच्छेद 16 लोक नियोजन में अवसर की समानता को सुनिश्चित करता है एवं यह भी स्पष्ट

करता है कि अनुच्छेद 15 में वर्णित किसी भी आधार पर कोई भी नागरिक किसी भी पद के लिए अपात्र घोषित नहीं किया जाएगा । अनुच्छेद 17 इस तथ्य पर बल देता है की देश में किसी भी प्रकार के छुआछूत को स्वीकार नही किया जायेगा अर्थात इस प्रकार की मान्यता कानून द्वारा निषिद्ध की जाएगी । यदि कोई व्यक्ति या संस्था इस प्रकार व्यवहार करेंगे तो वह कानून के द्वारा दंडनीय होगा । अनुच्छेद 18 उपाधियों के अंत को वर्णित करता है की राज्य केवल सेना एवं शिक्षा संबंधी उपाधि प्रदान कर सकेगा अन्य किसी आधार पर किसी भी प्रकार की उपाधि राज्य द्वारा नहीं दी जायेगा जो नागरिकों में विभेद उत्त्पन्न करती हो अनुच्छेद 19 नागरिकों को वाक् अभिव्यक्ति सम्मेलन संघ बनाने की भारत के किसी भी राज्य क्षेत्र में भ्रमण एवं व्यापार, करने की निवास करने की (जम्मू-कश्मीर को छोड़कर) स्वतंत्रता प्रदान करता है । इसी प्रकार भारतीय संविधान में प्रदत्त अन्य उपबंध जैसे की राज्य के निति निर्देशक तत्व, चुनाव संबंधि प्रावधान आदि भी समानता के मूल्यों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से स्थापित करने का प्रयास करते है।[12] अतः यदि संक्षेप में कहा जाये तो लोकतंत्र एक ऐसी शासन व्यवस्था है 'जिसमें मूल भी जनता है, तना भी जनता है, शाखा, फूल, पत्तियां सब नागरिको का समान दर्जा ही है।' अर्थात् इस शासन व्यवस्था का आधार जनता है इसकी निर्माणकर्ता जनता है और इसका निर्माण भी जनता के लिए ही हुआ है। जैसा

की लोकतंत्र के मूल्यों के बारे में पूर्व में वर्णित किया जा चुका है । लोकतंत्र के उन्ही मूल्यों को भारतीय संविधान निर्माताओं ने संविधान की उद्देशिका एवं मौलिक अधिकारों के द्वारा परिपूर्ण करने का प्रयास किया है। यही भारतीय लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था का आधार है ।

भारत में नगरीय स्थानीय स्वशासन

भारत में स्थानीय स्वशासन एवं नगरीय व्यवस्था कोई आधुनिक या नवीनतम नहीं है बल्कि इसका इतिहास बहुत पुराना है। यद्यपि "यह सत्य है कि जिस अवस्था में स्थानीय स्वशासन संस्था आज विद्यमान है,उसका स्वरूप प्राचीन व्यवस्था से सर्वथा भिन्न है । वर्तमान समय की तुलना में स्थानीय संस्थाएं प्राचीन एवं मध्यकाल में अत्यधिक सफल मजबूत एवं यथार्थ थी क्योंकि उस समय ये संस्थाएं प्रत्येक गाँव में विद्यमान होती थी। प्रत्येक व्यक्ति को इनसे लाभ प्राप्त होता था ।[13] जिसके सम्बन्ध में एम्. के. गाँधी का कथन है की "पंचायतों का स्वरूप प्राचीन है,यह एक शुभ है यह सामान्य रूप से ग्रामीणों द्वारा चयनित पंचो की सभा है जिन्हें लोगों ने शासन का प्रतिनिधित्व के लिए भारतीय गणराज्य के असंख्य गाँवों में निर्वाचित किया जाता था।"[14] ऋग्वैदिक काल में सभा शब्द एकत्रित जन समूह एवं सभामंडप दोनों प्रकार की सभाओं के किये प्रयुक्त किया जाता था ।[15]

ऋग्वैदिक काल में एक संस्था का प्रावधान था इस संस्था में जनजातिय लोग अपने व्यापार का आदान प्रदान करने धार्मिक विचारों की चर्चा करने एवं सांस्कृतिक मूल्यों के सम्बन्ध में विचार विमर्श करने के लिए एकत्रित होते थे । जिसे समिती कहा जाता था।

इस प्रकार यदि हम स्पष्ट रूप से कहें तो स्थानीय स्वशासन संस्था भारत में प्रागैतिहासिक हैं जोकि देश की मिटटी में बसी हुई है । भारत में अनेक साम्राज्यों का उत्थान एवं पतन हुआ परन्तु स्थानीय स्वशासन संस्था अथवा पंचायती राज व्यवस्था इस राष्ट्र का अभिन्न अंग साबित हुई हैं। जिनका समय समय पर स्वरुप तो परिवर्तित हुआ है पर अस्तित्व हमेशा बना रहा है। इन संथाओं ने भारत के सामाजिक आर्थिक संस्कृतिक एवं लोकतान्त्रिक जीवन की रक्षा की है एवं भारतीय समाज को सैकड़ों वर्षों तक राजनैतिक उथल पुथल के कारण विघटित होने से बचाया है । भारत में स्थानीय स्वशासन का अस्तित्व होना इस बात की पुष्टि करता है, कि भारतीय जनता में प्रशासनिक कार्यों को विकेंद्रीकृत रूप में स्थानीय स्तर से सँभालने की प्रतिभा भी निहित है। पश्चिमी समाज आधुनिक समय तक शक्तियों के हस्तांतरण से अनभिज्ञ था । स्थानीय सरकारें विभिन्न स्तरों पर अनेक विभिन्न भूमिकायें निभाती थी। यद्यपि यह बहुत लोकतांत्रिक नहीं परन्तु पर्याप्त थीं,परन्तु भारत में स्थानीय स्वशासन को सुद्रढ़ करने के लिए अनेक प्रयास किये गए एवं नगरीय स्तर पर

भी इसमें अनेक संविधानिक प्रावधान किये गए नए नियमों को लागू किया गया एवं परम्पराओं को ग्रहण किया गया । [16]

भारत में नगरपालिकाओं का विकास:

वर्तमान भारत में नगर पालिकाओं का जो रूप विद्यमान है वह पूर्णतः नवीन प्रतीत होता है परन्तु नगरीकरण एवं नगरीय स्वशासन व्यवस्था कोई नयी व्यवस्था नहीं हैं क्योंकि भारत में नगरीयकरण के विकास से सम्बंधित साक्ष्य सिन्धुघाटी सभ्यता से प्राप्त होते है। भारत में नगरीयकरण के विकास का वर्णन चरणबद्ध रूप से प्रस्तुत तालिका में दिया गया है :-

समयावधि	विकास
2300-1750 ई.पू. सिन्धु घाटी सभ्यता	• संगठित नगरीय जीवन के साक्ष्य : बड़े मार्ग , बाजार लोक -कार्यालय • सामुदायिक स्नानागार जल निकाशी एवं नालों की व्यवस्था
मौर्य साम्राज्य के पश्चात	• नगरीय प्रशासन के कार्यों की देखभाल के लिए कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति जिसे नगरीय स्तर के विभिन्न कार्य देखने होते थे जैसे नगरीय स्वच्छता, स्वास्थ्य एवं जिसमे जल निकासी

	सड़कों की सफाई इत्यादि की व्यवस्था भी सम्मिलित थी ।
350-540 ईसवी	• नगर परिषद् द्वारा प्रशासित • निर्वाचित प्रशासनिक अधिकारियों का प्रावधान
1526 - 1707 इसवी (मुग़ल)	• नगरीय प्रशासन कोतवाल में निहित था जो कि नगर अध्यक्ष होता था एवं जिसके अधीकार क्षेत्र में मुख्य पुलिस आयुक्त, न्यायाधीश एवं नगरीय प्रशासन के प्रधान की शक्तियां एवं कार्य आते थे
मुग़ल साम्राज्य के पतन एवं ब्रिटिश साम्राज्य के आगमन के मध्य	• देश के अधिकाँश भागों में अराजकतावाद एवं सैन्य सामंतवाद • स्थानीय संस्थाएं विकृत एवं शिथिल हो गयी
1642	• सर जोसिया चाइल्ड को मद्रास नगर - निगम की स्थापना के लिए ब्रिटिश शासक जेम्स द्वितीय का घोषणा - पत्र प्राप्त हुआ

1720	• तीन महानगरों मद्रास बॉम्बे एवं कलकत्ता में मेयर कोर्ट की स्थापना के लिए राजसी घोषणा - पत्र
1793	• परिषद् में गवर्नर जनरल को शक्ति प्रदान की गयी कि वह नगर में शांति व्यवस्था व्यस्था बनाये रखने के लिए नागरिको एवं ब्रिटिश कर्मचारियों में से न्यायाधीश की नियुक्ति कर सके जिसका कार्य गृह-कर एवं भूमि-कर लागू करना एवं नगर की स्वच्छता व्यवस्था बनाये रखना होगा • इस घोषणा-पत्र के द्वारा ब्रिटिश सरकार ने मद्रास बॉम्बे एवं कलकत्ता में स्थानीय स्वशासन की स्थापना की।
1850	• लोक-स्वास्थ्य एवं सुविधा को बेहतर करने के लिए एक अधिनियम पारित किया गया एवं इस अधिनियम के द्वारा अभ्यस्त लोगो के लिए अप्रत्यक्ष करारोपण व्यवस्था की गयी ।
1863 तक	• नगरीय क्षेत्रों में स्थानीय संस्थाओं ने कुछ विशेष

	प्रगति नहीं की एवं यह 20 शहरों तक ही सीमित रह गयी • लोगो को इन संस्थाओं में भागीदारी का अवसर भी नहीं दिया गया • रॉयल आर्मी सैनिटेशन कमीशन ने सम्पूर्ण भारत में स्वच्छता की बिगडती हुई हालत को चिन्हित किया • भारतीय सरकार ने शहरी क्षेत्रों में नगरीय निकायों के गठन के हेतु विभिन्न प्रान्तों के गवर्नरों के लिए कई अधिनियम पारित किये
1870	• केंद्र से प्रान्तों तक प्रशासनिक विकेंद्रीकरण के लिए लार्ड मेयो का प्रस्ताव पारित हुआ भारतीय प्रशासनिक संगठनों की वृद्धि के विचार पर बल दिया गया नगर निगम के स्वशासन के विस्तार का संकेत दिया गया चुनाव के सिद्धांत के सामान्य आवेदन के लिए प्रोत्साहन • नगर निगम की शक्तिओं में वृद्धि के लिए नगर-निगम कानून पारित निर्वाचन व्यवस्था को अग्रसर

	करने स्थानीय वित्त व्यवस्था का सूत्रपात करने , लेकिन प्रावधान अभ्यास के रूप में कम ही लागू किया गया क्योंकि उन दिनों जिला अधिकारिओं को वैकल्पिक विचारों के सिद्धांत से सहानुभूति नहीं थी • प्रत्येक महत्वपूर्ण शहर में नगर पालिका स्थापित की गयी हालाँकि यह नगर - निगम संस्थाएं पूर्ण रूप से जिला न्यायाधिकारी के नियंत्रण में थी एवं नगरीय लोग सिर्फ पुलिस के भरण - पोषण , संरक्षण एवं सड़कों की मरम्मत के लिए पूंजी की वित्त की व्यवस्था करने के लिए जुड़े हुए थे
1870 के पश्चात एवं 1880 तक	• भारतीय समाज में आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन • शिक्षित भारतीयों द्वारा अधिक राजनैतिक अधिकारों की मांग लोक - सेवा, लोक - प्रशासन में अधिक से अधिक भागीदारी की मांग • स्थानीय स्वशासन के सिद्धांतों केवल कलकत्ता, बॉम्बे शहर में एवं कुछ केन्द्रीय प्रान्तों एवं कुछ

	उत्तर पश्चिमी के प्रान्तों में अभ्यास में लाया गया यद्यपि अन्य जगहों पर स्थानीय करारोपण के रूप में स्थानीय प्रशासन का ढांचा अस्तित्व में था जिसका नियंत्रण सरकारी कर्मचारियों के हाथ में था
1882	• लार्ड रिपन का प्रस्ताव पारित हुआ जिसमे स्थानीय स्वशासन संस्थाओं का एक नेटवर्क बनाने के लिए समर्थन किया गया आधिकारिक तत्वों में कमी कुल सदस्यता के एक तिहाई सदस्य नहीं ,वित्तीय विकेंद्रीकरण के वृहत उपाय संगठित स्थानीय निकायों के लिए चुनाव प्रक्रिया को अंगीकार करना • नगर - नियम अधिनियम पारित किया गया लार्ड रिपन के सुधारों को लघु सफलता , क्योंकि वे कट्टरपंथी माने जाते थे
1888	• स्थानीय सरकार के कामकाज के कुछ वर्षों बाद सकारात्मक परिणाम आये ,महाप्रांत नगरों की प्रणाली ने जिम्मेदार सरकार की भूमिका निभायी ,

	बॉम्बे नगर निगम अधिनियम 1888 के अंतर्गत बॉम्बे नगर परिषद् नामित एवं चयनित सदस्यों के बहुमत से गठित की गयी ,परिषद के प्रमुख कार्यो को करने के लिए एक स्थाई समिति गठित की गयी जिसका अध्यक्ष निर्वाचित होता था
1907	• भारत सरकार एवं प्रांतीय सरकारों की आर्थिक एवं प्रशासनिक सरकारों की जांच के लिए विकेंद्रीकरण रायल आयोग की व्यवस्था की गयी • आयोग के सुझाव लार्ड रिपन के सुझावों के सामान थे • प्रान्तों के नगर निगम अधिनयम में संशोधन किया गया परन्तु व्यवहारिक रूप से इनमें कोई सुधार नहीं हुआ • स्थानीय स्वशासन का कार्य जिला अधिकारी कार्यों के अंतर्गत ही आता था
1914-1919	• स्वतंत्रता के लिए राष्टीय आन्दोलन में तेजी • 1917 का घोषणा - पत्र पारित - भारतीयों को स्तानीय संस्थाओं के उत्तरोत्तर विकास के किये

	प्रशासन की प्रत्येक शाखा के साथ जोड़ा • मोंटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारों द्वारा प्रतिनिधि एवं उत्तरदायी स्थानीय स्वशासन का सूत्रपात किया गया • भारत सरकार अधिनियम 1935 अधिनियमित किया गया जिसमें स्थानीय स्वशासन का उत्तरदायित्व जिला अधिकारी के अधिकार क्षेत्र से लोकप्रिय मंत्री द्वारा नियंत्रित विभाग के अधिकार - क्षेत्र में सौपा गया स्थानीय निकायों को चुनावों के लिए काफी हद तक रियायत दी गयी, नगरीय निकायों को एक संविधिक सीमा तक करों में कटौती एवं वृद्धि करने की शक्ति दी गयी; प्रान्तीय सरकार के मंत्रीयों ने निर्वाचन परिषद की स्थापना की एवं निर्वाचित अध्यक्ष को कार्यकारी अधिकार सोंपे गए अधिकांश नगर - निगम भ्रष्टाचार एवं अकुशलता के शिकार • 1947 में भारत को स्वतंत्रता प्राप्ति
1947	• 1919 से 1937 की अवधि के दौरान

	अधिनियमित स्थानीय निकायों से सम्बंधित कानून नगर निगम मामलों के प्रबंधन को प्रभावी बनाने में दिन - प्रतिदिन विफल,नगर निगम के कार्यों प्रशासनिक दक्षता एवं जिम्मेदारी के निर्धारण के प्रश्न पर शायद ही ध्यान दिया गया • अक्षमता के परिणाम स्वरुप आधिकारिक हाथों से सत्ता का हस्तान्तरण अधिकांश नगर - निगम भ्रष्टाचार एवं अकुशलता के शिकार • 1947 में भारत को स्वतंत्रता प्राप्ति
1950	• नवीनतम संविधान का निर्माण : सिर्फ ग्रामीण व्यवस्था से सम्बंधित प्रावधान निहित ,नगरीय स्थानीय स्वशासन से सम्बंधित अवलोकन सिर्फ 2 प्रविष्टियों में निहित था 1- सातवी अनुसूची राज्य सूची में 5 (8) 20^{9} • संविधान में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत स्थानीय स्वशासन को स्थान एवं नगरीय स्थानीय स्वशासन उसी में अंतर्निहित • संविधानिक प्रावधान एवं स्पष्ट सांविधिक शक्तियों

	के कार्यों एवं स्त्रोतों के अभाव में नगरीय स्थानीय स्वशासन की उपेक्षा की गयी उनकी संरचना एवं कार्यों में बहुत कम परिवर्तन किया गया
1949 तक	• नगरीय स्थानीय स्वशासन की कार्यप्रणाली के अध्ययन हेतु लिए केंद्र एवं राज्य सरकार के द्वारा कई समिति एवं आयोग नियुक्त किये गए जिससे इस व्यवस्था में सुधार के लिए सुझाव प्रस्तुत किये जा सके • नगरीय स्थानीय स्वशासन की समस्यायों की जांच हेतु 1954 में केन्द्रीय परिषद् का गठन • नगरीय स्थानीय स्वशासन के उत्तरदायित्व एक मंत्रालय के बधिकार क्षेत्र से अलग मंत्रालयों के अधिकार क्षेत्र में आ गये जैसे - स्वास्थ्य मंत्रालय, कार्य-मंत्रालय नगरीय आवास एवं विकास मंत्रालय (1966) स्वास्थ्य कार्य परिवार नियोजन , एवं नगरीय विकास मंत्रालय (1967) कार्य एवं आवास मंत्रालय (1973)
1985	• कई विभागों की सहायता से नगरीय विकास

	मंत्रालय स्थापित । • शहरीकरण से होने वाली समस्याओं का आंकलन एवं इन समस्याओ से निपटने हेतु सुझाव प्रस्तुत करने के लिए । • शहरीकरण पर राष्ट्रिय आयोग गठित किया गया।
1989	• 63वें संविधान संशोधन को लागू करने का प्रयास इस विधेयक को नगर पलिका विधेयक के नाम से भी जाना गया इसके अंतर्गत नगरीय स्थानीय स्वशासन को सुद्रढ़ बनने के लिए प्रावधान किये गए। • संसद में ये विधेयक तीन मतों के मामूली अंतर से विफल हो गया ।
1991	• सरकार द्वारा संविधान का 73वां संशोधन प्रस्तुत • बिल को राज्य सरकार के अधिकारों का अतिक्रमण बता कर खारिज कर दिया गया
1992	• अंततः संविधान का 74वां संशोधन स्वीकृत एवं अधिनियमित (1) सभी नगर पालिकाओं के लिए एक सामान

	संविधानिक प्रारूप (2) नगर पालिकाओं की संरचना (3) वार्ड समितियों के लिए संविधान एवं संयोजन (4) स्थानों का आरक्षण एवं निर्वाचन (5) नगर निगम की अवधि (6) नगरपालिकाओं की शक्ति सत्ता एवं उत्तरदायित्व (7) राज्य वित्त आयोग के लिए प्रावधान,(8)जिला योजना एवं महानगर योजनाओं के लिए समिति
1992 तक	• अधिकांश राज्यों में नगर निगम अधिनियम संशोधित • नगरीय स्थानीय स्वशासन की संरचना एवं कार्यों में सुधार जारी [17]

संविधान के 74 वें संशोधन के प्रावधान :-

- स्थानीय निकायों की संरचना का आधार क्षेत्र की जनसंख्या

1.अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र नगर पालिका, और कम जनसँख्या वाले क्षेत्र नगर परिषद के अंतर्गत आयेंगे एवं जो क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र से शहरीकारण की और परिवर्तित हो रहे है वो नगर पंचायत के क्षेत्र होंगे

- नगर - निगम के प्रादेशिक क्षेत्र के लिए वार्ड समितियों का गठन जिससे तृणमूल स्तर तक जनता की नाग्नगर के कार्यों में भागीदारी हो
- सांविधिक रूप से संघटित राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा नगर - निगम के नियमित एवं निष्पक्ष चुनाव कराना, 6 माह से अधिक नगर निगम सरकार के स्थगन के प्रावधान नहीं है
- समाज के कमजोर तबके के लिए स्थानों का आरक्षण जिसमे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, एवं सभी वर्ग की महिलाओं के लिए आरक्षण
- राज्य विधान सभा द्वारा शक्तियों का विनिर्देशन नगर एवं वार्ड समितिओं का कार्यात्मक उत्तरदायित्व
- नगर - निगम की वित्तीय स्थिति की जांच करने के किये प्रत्येक पांच वर्ष बाद राज्य वित्त आयोग का गठन एवं उनकी विशेष जरूरतों के लिये सुझाव
- प्रत्येक राज्य के महानगरीय क्षेत्रों के लिए जिला स्तर पर जिला योजना समिति एवं महानगरीय योजना समिति [18]

74वें संविधान संशोधन में नगरीय स्थानीय स्वशासन का त्रिस्तरीय ढांचा:

(1) नगर-पंचायत: नगर पंचायत नगरीय स्थानीय निकाय की सबसे छोटी इकाई है ।जिसकी जनसंख्या समय-समय पर राज्यो द्वारा सुनिश्चित की जाती है । ये ऐसे क्षेत्र है जो ग्रामीण परिवेश से शहरीकरण की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं ।

नगर-पंचायतो को बहुत छोटे शहरो के लिए भी स्थापित कर दिया गया है । नगर पंचायत के निर्वाचित सदस्यों के साथ-साथ उस क्षेत्र से संबंधित विधानसभा का सदस्य भी इसका पदेन सदस्य होता है।

(2) नगर-पालिका परिषद: नगरीय स्थानीय स्वशासन की सर्वाधिक प्रचलित संस्था है ।प्रत्येक नगर में नगर पालिका परिषद स्थापित है । स्वाभाविक रूप से प्रथक-प्रथक राज्य में कार्य करने वाली नगर-पालिकाओं की संख्या नगरों की संख्या के आधार पर अलग-अलग है। इसके अनुसार ऐसे सभी क्षेत्रों में नगर-निगम स्थापित नहीं किये गये, जहाँ नगर-पालिका परिषद कार्य कर रहीं है । नगर पालिका परिषद के सदस्यों में नगरपालिका क्षेत्र के लोगों द्वारा प्रत्यक्ष रूप में निर्वाचित प्रतिनिधियों के अतिरिक्त, का क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले विधान-सभा के सदस्य सम्बंधित नगर- पालिका के पदेन सदस्य होते हैं ।

(3) नगर-निगम एवम् नगर-पालिका निगम:- नगर-निगम नगरीय स्थानीय स्वशासन की सबसे बड़ी एवम् शक्तिशाली संस्था है । जो की प्रत्येक बड़े शहर एवम् महानगर के लिये स्थापित की गयी है ।प्रत्येक नगर निगम राज्य विधान -पालिका द्वारा पारित किये गए कानून पर स्थापित किया जाता है परंतु ,संविधान के 74वें संशोधन द्वारा नगरीय स्थानीय निकायों को स्वायत्त बनाने का प्रयास किया गया है । इस संसोधन के पास होने के पहले प्रत्येक नगर-निगम की रचना एवम् कार्यो का निर्धारण उस राज्य की विधानसभा

द्वारा निर्मित कानूनों के आधार पर किया जाता था । प्रत्येक नगर-निगम में सम्बन्धित शहरी क्षेत्र प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित प्रतिनिधि सदस्य होते हैं जिन्हें नगर-पार्षद कहा जाता है एवम् एक अध्यक्ष होता है, जिसे नगर महापौर अथवा मेयर कहा जाता है ।[19]

फुट नोट :

---

[1] http://www.democracy-asia.org/qa/india/Rajeshwari%20Deshpande.pdf

[2] Upadhyay Dr.jai Jai Ram (2010)Constitution Of India Brae Act, central Law Agency

[3] Basu Durga Das(2008) Constitutional Law Of India, LexisNexis, ISBN13:9780876920244

[4]Ibid.

[5] Ibid.

[6] संसदीय लोकतंत्र की गोष्ठी में पंडित नेहरु का भाषण

[7] http://ijra.in/uploads/41649.9698613657fullpaper_Pratham%20&%20Rohit%20Anant%20Sahay.pdf

[8] Basu Dr.Durga Das(2009)Introduction to the Constitution of IndiaLexisNexis,ISBN-9788180385599

[9] Basu Durga Das(2008)Constitutional Law Of India, LexisNexis, ISBN13:9780876920244

[10] https://indiankanoon.org/doc/1120103/

[11] Upadhyay Dr.jai Jai Ram (2010)Constitution Of India Brae Act, central Law Agency

[12] Basu Durga Das(2009) Introduction to the Constitution of IndiaLexisNexis,ISBN-9788180385599

[13] Chandra Bipan Evolution Of Local Self Government In India Historical perspective "p.14

[14] http://ir.inflibnet.ac.in:8080/jspui/bitstream/10603/66871/7/07_chapter%201.pdf

[15] Chandra Bipan Evolution Of Local Self Government In India Historical perspective "p.14

[16] http://www.mkgandhi.org/ebks/panchayat_raj.pdf

[17] http://www.lse.ac.uk/asiaResearchCentre/_files/ARCWP19-Aijaz.pdf

[18] http://indiacode.nic.in/coiweb/amend/amend74.htm

[19] http://www.mkgandhi.org/ebks/panchayat_raj.pdf